न्यायिक सक्रियता की ओर बढ़ते कदम (When Judges Legislate)

drishtiias.com/hindi/current-affairs-news-analysis-editorials/news-editorials/20-11-2018/print

संदर्भ

हाल के कई निर्णयों से ऐसा माना जा रहा है कि सर्वोच्च न्यायालय कानून निर्माण करने में अति सक्रिय भूमिका निभा रहा है। न तो राज्य के तीनों अंगों के बीच शक्तियों का स्पष्ट पृथक्करण है और न ही कानून संरक्षित किया जा रहा है। उल्लेखनीय है कि राम जवाया बनाम पंजाब राज्य (1955) के मामले में, अदालत ने कहा था कि "हमारा संविधान राज्य के एक अंग या हिस्से की धारणा पर विचार नहीं करता है, जो अनिवार्य रूप से एक-दूसरे से जुड़े हैं।" इसका तात्पर्य है कि संविधान में राज्य के तीन अंगों (विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका) के बीच शक्तियों का स्पष्ट पृथक्करण होना चाहिये और एक अंग को दूसरे के क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं करना चाहिये। यदि ऐसा होता है, तो संविधान के नाजुक संतुलन को हानि पहुँचेगी और अराजकता फैलेगी।

न्यायिक सक्रियता क्या है?

- न्यायपालिका संवैधानिक प्रणाली के तहत संवैधानिक मूल्यों और नैतिकता को बनाए रखने के लिये सक्रिय भूमिका निभाती है।
- नागरिक दुविधाओं को संबोधित करने और कानूनों के सकारात्मक और मानक पहलुओं के बीच अंतर को भरने के लिये न्यायपालिका अपने स्वविवेक और रचनात्मकता का प्रयोग कर न्याय निर्गमन करती है परिणामतः न्यायिक सक्रियता का उद्भव होता है।
- ‘न्यायिक सक्रियता’ शब्द न्यायाधीशों के निर्णय को संदर्भित करता है। न्यायिक समीक्षा को एक सिद्धांत के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसके तहत न्यायपालिका द्वारा विधायिका और कार्यपालिका के कार्यों की समीक्षा की जाती है।
- उल्लेखनीय है कि न्यायिक समीक्षा को विधायी कार्यों की समीक्षा, न्यायिक फैसलों की समीक्षा और प्रशासनिक कार्रवाई की समीक्षा के तीन आधारों पर तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।
- न्यायालय, न्यायिक समीक्षा द्वारा कार्यपालिका और विधायिका दोनों को नियंत्रित कर सकते हैं।

शक्ति पृथक्करण का सिद्धांत

- विभिन्न प्रावधानों के तहत संविधान ने विधायिका और न्यायपालिका के बीच संबंधित कार्यप्रणाली में अपनी स्वतंत्रता बनाए रखने के लिये स्पष्ट रूप से रेखा खींची है।
- हालाँकि, भारत के संविधान में शक्ति पृथक्करण के सिद्धांत का कहीं भी स्पष्ट उल्लेख नहीं है, लेकिन सरकार के विभिन्न अंगों के कार्यों में पर्याप्त रूप से अंतर है, इस प्रकार सरकार का एक अंग दूसरे अंग के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

- जहाँ अनुच्छेद 121 और 211 विधायिका को अपने कर्तव्यों के निर्वहन में किसी भी न्यायाधीश के आचरण पर चर्चा करने से मना करते हैं, वहीं दूसरी तरफ, अनुच्छेद 122 और 212 अदालतों को विधायिका की आंतरिक कार्यवाही पर निर्णय लेने से रोकते हैं।
- इसके अतिरिक्त भारतीय संविधान के अनुच्छेद 105 (2) और 194 (2) विधायकों को उनकी भाषण की स्वतंत्रता और वोट देने की आजादी के संबंध में अदालतों के हस्तक्षेप से रक्षा करते हैं।
- ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ न्यायपालिका द्वारा विधायिका के कार्यक्षेत्र का अतिक्रमण किया गया है। यथा - अरुण गोपाल बनाम भारत संघ (2017), एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ (2018), सुभाष काशीनाथ महाजन बनाम महाराष्ट्र राज्य (2018) तथा राजेश शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2017) आदि।
- उल्लेखनीय है कि एनजीटी द्वारा आदेश दिया गया है कि 15 वर्षीय पेट्रोल संचालित और 10 वर्षीय डीज़ल संचालित वाहन दिल्ली में नहीं चलाए जाएंगे और सुप्रीम कोर्ट ने ऐसे वाहनों को अपनाने का निर्देश दिया है, हालाँकि न तो एनजीटी और न ही सर्वोच्च न्यायालय विधायी निकाय है।

न्यायिक सक्रियता के पक्ष में तर्क

- यह अन्य सरकारी शाखाओं में चेक और शेष राशि की एक प्रणाली प्रदान करती है। न्यायिक सक्रियता रचनात्मकता से युक्त एक नाजुक अभ्यास है। यह न्याय-निर्णयन में आवश्यक नवाचार लाती है।
- न्यायिक सक्रियता न्यायाधीशों को उन मामलों में अपने व्यक्तिगत ज्ञान का उपयोग करने का अवसर प्रदान करती है जहाँ कानून संतुलन प्रदान करने में विफल रहा।
- इसके अतिरिक्त न्यायिक सक्रियता भी मुद्दों में अंतर्दृष्टि प्रदान करती है, यही कारण है कि यह स्थापित न्याय प्रणाली और उसके निर्णयों में त्वरित विश्वास कायम करती है।
- कई बार सार्वजनिक शक्ति लोगों को नुकसान पहुँचाती है, इसलिये न्यायपालिका के लिये सार्वजनिक शक्ति के दुरुपयोग को जाँचना आवश्यक हो जाता है।
- यह तेज़ी से उन विभिन्न मुद्दों पर समाधान प्रदान करने का एक अच्छा विकल्प है, जहाँ विधायिका बहुमत के मुद्दे पर फँस जाती है।

न्यायिक सक्रियता के विपक्ष में तर्क

- न्यायाधीश किसी भी मौजूदा कानून को ओवरराइड कर सकते हैं। इसलिये यह स्पष्ट रूप से संविधान द्वारा तैयार की गई सीमा रेखा का उल्लंघन करता है।
- न्यायाधीशों की न्यायिक राय अन्य मामलों पर शासन करने के लिये मानक बन जाती है। इसके अतिरिक्त निर्णय निजी या स्वार्थी उद्देश्यों से प्रेरित हो सकते हैं जो जनता को बड़े पैमाने पर नुकसान पहुँचा सकते हैं।
- अदालतों के बार-बार हस्तक्षेप के कारण लोगों का विश्वास सरकारी संस्थानों की गुणवत्ता, अखंडता और दक्षता के प्रति कम हो जाता है।

न्यायिक सक्रियता एक अग्रगामी कदम

- जब विधायिका बदलते समय के अनुरूप आवश्यक कानून बनाने में विफल रहती है और सरकारी एजेंसियाँ ईमानदारी से अपने प्रशासनिक कार्यों को निष्पादित करने में बुरी तरह विफल हो जाती हैं तो संवैधानिक मूल्यों और लोकतंत्र में नागरिकों के आत्मविश्वास का क्षरण होता है।
- ऐसे परिदृश्य में न्यायपालिका आमतौर पर विधायिका और कार्यपालिका के लिये निर्धारित क्षेत्रों में कदम उठाती है तो परिणाम न्यायिक कानून और न्यायपालिका द्वारा सरकार के रूप में सामने आते हैं।
- यदि नागरिकों के मौलिक अधिकारों का हनन सरकार या किसी अन्य तीसरे पक्ष द्वारा किया जाता है, तब न्यायाधीश स्वयं नागरिकों की सहायता करने का कार्य कर सकते हैं।

आगे की राह

न्यायिक सक्रियता संविधान द्वारा समर्थित नहीं है; यह न्यायिक अधिकारियों द्वारा पूरी तरह तैयार एक उत्पाद है। जब न्यायपालिका न्यायिक सक्रियता के नाम पर दी गई शक्तियों की सीमा रेखा पर कदम उठाती है, तो कोई यह कह सकता है कि न्यायपालिका तब संविधान में निर्दिष्ट शक्तियों के पृथक्करण की अवधारणा को समाप्त करने लगती है। न्यायाधीश अपने विकल्पों के अनुसार कानून बनाने के लिये स्वतंत्र हैं, जिससे वे न केवल शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत के खिलाफ जाते हैं, बल्कि यह कानून और अराजकता में अनिश्चितता भी पैदा कर सकता है क्योंकि इस आधार पर प्रत्येक न्यायाधीश अपनी इच्छाओं और प्रशंसकों के अनुसार अपने कानून तैयार करना शुरू कर देगा।

अतः स्पष्ट संतुलन बनाए रखने के लिये न्यायिक अनुशासन पर विचार किया जाना चाहिये। कानून बनाना और कानूनों के बीच अंतर को भरना विधायिका का कर्तव्य है और इसे उचित तरीके से लागू करना कार्यपालिका का कार्य है। इसका लाभ यह है कि न्यायपालिका को केवल एक कार्य यानी अपने कार्यक्षेत्र की ही व्याख्या करनी होगी परिणामतः इससे सरकार के सभी अंगों के बीच सुसंगत संतुलन और संवैधानिक मूल्यों को बनाए रखा जा सकता है।